इक्कीसवीं सदी का मराठी सिनेमा

जगदाले अप्पासाहेब गोरक्ष
शोधार्थी,
हिन्दी एवं भारतीय भाषा विभाग,
हिमाचल प्रदेश केन्द्रीय विश्वविद्यालय,
धर्मशाला -176215

भारतीय सिनेमा के इतिहास में मराठी सिनेमा का विशेष योगदान रहा है। इक्कीसवीं सदी के मराठी सिनेमा ने समाज के हर वर्ग के यथार्थ को पर्दे पर बड़ी संवेदनशीलता के साथ चित्रित किया है। सिनेमा के सौ वर्ष पूर्ण होने के बाद आज इक्कीसवीं सदी के मराठी कलाकारों ने मराठी सिनेमा को विश्व स्तर पर एक नई पहचान दिलायी है। इस पूँजीवादी दौर में सिनेमा अपने मूलभूत मार्ग से हटकर अपने उद्देश्य मानव कल्याण से संबंधित न हो करके व्यावसाय पर पूर्णतः आधरित हो चुका है। समकालीन मराठी सिनेमा ने समाज के लिए एक आदर्श प्रतिमान स्थापित किया है। मराठी फिल्में सिर्फ महाराष्ट्र ही नहीं पूरे भारत के सामाजिक परिवेश व उसकी समस्याओं को पर्दे पर साकार किया एवं लोगों को इसके प्रति सजग तथा जागरूक बनाया है। 21वीं सदी की मराठी फिल्मों में 'बालक-पालक', 'टाइम पास', '35 टक्के वर पास', 'ख्वाड़ा', 'किल्ला', 'जाणीवा', 'सैराट', 'रिंगण', 'मी येतोय', 'गावठी', 'चुंबक' आदि ऐसी ही मराठी फिल्में हैं जो मराठी परिवेश के माध्यम से पूरे भारत की कहानी बयान करती है। वह समाज के आम-आदमी की कहानी को बड़ी सादगी के साथ व्यक्त करती है। इन मराठी फिल्मों का नायक भी समाज के मध्य या बीच से आता है, जिसका सिनेमा जगत से दूर-दूर तक कोई वास्ता नहीं। किसी दूर-दराज के ग्रामीण अंचल से आने वाले इन फिल्मों के पात्र अपने समाज के यथार्थ को बड़ी संजीदगी के साथ व्यक्त करते हैं। यह मराठी सिनेमा की बड़ी उपलब्धि है। इससे पहले मराठी सिनेमा का दायरा कुछ सीमित लोगों तक ही था। मराठी सिनेमा में कई अभिनेता, निर्देशक मराठी भाषी न होकर भी मराठी भाषा में फिल्म प्रदर्शित कर रहें हैं जो अच्छी एवं सुपरहिट साबित हुई हैं, जिसकी संख्या दिनोंदिन बढ़ ही रही है। 2017-18 के दशक में हिन्दी के कई दिग्गज कलाकार भी मराठी सिनेमा में अपना भाग्य आजमा रहे हैं। जिससे मराठी सिनेमा के स्तर का अनुमान लगाया जा सकता है।

'बालक-पालक' (4 जनवरी 2013) फिल्म की कथावस्तु 'सेक्स' विषय पर आधारित है। इस फिल्म के निर्देशक रवि जाधव हैं। फिल्म में प्रथमेश तथा भाग्यश्री, डॉली गावस्कर तथा भाग्य श्रेगे इन चार बच्चों का समूह है। भारतीय संस्कृति में दिवाली का त्यौहार बहुत ही धूमधाम एवं खुशी के साथ मनाया जाता है। बच्चे

छुट्टी में मस्ती करने के लिए कोई न कोई खेल का आयोजन करते हैं। उस दौरान इन बच्चों को पता चल जाता है कि 'ज्योति ताई' घर छोड़कर जा रही हैं लेकिन वे क्यों जा रही है उसका कारण कोई नहीं बताता है। बस ज्योति ताई ने 'शेण खाल लिया है, (गौबर खा लिया है) सब यही कहते हैं। इसका जवाब 'आव्या' नामक लड़का बहुत ही किताबों में ढूंढता है मगर उत्तर नहीं मिल पाता। वे सभी बच्चे उस वाक्य का अर्थ जानना चाहते हैं ताकि पत्ता चल सकें कि ज्योति ताई घर छोड़कर क्यू जा रही है ? बच्चे आपस में तय करते हैं कि हम सबने बचपन में मिट्टी, चोख खाया मगर 'शेण खाल' या 'गौबर खाना' ये क्या खाना है? यह बच्चों को समझ नहीं आता है इसलिए वे घर में अपने माँ-बाप से पूछते हैं लेकिन उन्हें घर में इसका अर्थ बताने के बजाय चुप ही कराया जाता है और उन्हें मार तक पड़ती है।

समाज में शिक्षा के कारण ही ज्ञान-विज्ञान को बढ़ावा मिलता है। पहले की अपेक्षा आज की पीढ़ी के शिक्षा-स्तर में कुछ हद तक बदलाव हुआ है। अपने यहाँ 'सेक्स' विषय पर खुले तौर से चर्चा नहीं होती है चाहे वह घर में हो या समाज में, हर जगह लोग इस पर बात करने में हिचकिचाहट महसूस करते हैं। 'सेक्स' विषय को सामाजिक तौर पर इतना दबाया जाता है कि उस पर खुलेआम कोई बात नहीं करता है। ऐसे में बड़ा प्रश्न उठता है कि इन 10-12 साल के बच्चों के मन की व्यथा का निवारण कैसे किया जाए? 'विशु' नामक लड़के का स्वभाव टपोरी-सा है। वह उन बच्चों को दोस्त बनाता है जिन्हें 'सेक्स' के बारे में जानकारी चाहिए होती है। इसलिए वो उन सबको सेक्स की जानकारी वाली किताबें पढ़ने को देता है। मगर उन बच्चों के लिए इससे भी कोई सार्थक हल नहीं निकल पाता। अतः विशु ही उन लोगों के लिए इन सभी प्रश्नों के हल का एक मात्र साधन है। अंततः बहुत प्रयत्न करने पर उन्हें स्त्री-पुरुष संबंध के बारे में पता चलता है, तब जाकर उन्हें ज्योति ताई ने 'शेण खाल' (गोबर खा लिया) का अर्थ समझ में आता है, जिसका मतलब शादी से पहले लड़की का गर्भवती होना है। विशु के प्रस्तुत कथन "ढिचांग-ढिचांग ढिचांग"[1] से ही उन बच्चों को छुपे हुए सवालों का हल एवं 'शेण खाल' का अर्थ मिलता है। भाग्या नामक लड़के की उम्र नेहा बहन (ताई) के उम्र से दस-बारह साल छोटी है मगर उसकी ओर देखकर आकर्षण का भाव उभरता है। आव्या का मानना है कि यार... चिऊ भी तो एक लड़की है। प्रायः सेक्स के लिए स्त्री की उम्र, रिश्ता न देखकर हम कामवासना के अधीन होकर ही आकर्षण की ओर बढ़ते हैं।

भारतीय सिनेमा में 'सेक्स एजुकेशन' को लेकर मेरी दृष्टि में ऐसी दूसरी फिल्म देखने को नहीं मिली है। इसमें सभी बच्चे उम्र के उस नाजुक मोड़ पर हैं, जिनसे कुछ गलत हो सकता था मगर ऐसा नहीं होता है। 'बालक- पालक' सिनेमा पूरी तरह से सेक्स के इर्द-गिर्द होकर भी उसमें कोई अश्लीलता का दृश्य कहीं नजर नहीं आता है। यह मराठी सिनेमा की बड़ी उपलब्धि है। आज 'सेक्स एजुकेशन' की कमी अथवा गलत ज्ञान के कारण समाज में बच्चों का बड़ा वर्ग सेक्स की ओर आकर्षित होकर रेप जैसा घिनौना कृत्य कर बैठते हैं। सेक्स एजुकेशन देश में एक बड़ा मुद्दा है, जिस पर आज गंभीरता से सोचने की आवश्यकता है! जिसकी तरफ चर्चित मराठी फिल्म 'बालक-पालक' संकेत करती है।

'टाइम पास' (21 दिसंबर 2013) के निर्देशक रवि जाधव तथा अभिनेता-अभिनेत्री प्रथमेश व केतकी माटेगांवकर इसकी मूल भूमिका में हैं। इसका विषय दगडू एवं प्राजक्ता की प्रेम कहानी है। प्राजक्ता इस फिल्म में दो भूमिका में हमारे सामने आती है, एक फिल्म में स्वतः ही संगीत गायन करती है। दूसरी मूल नायिका की भूमिका में है। ये दोनों किरदार अपने कम उम्र में ही बहुत बड़ा अभिनय को साकार करती हैं। सिनेमा में दगडू नामक पात्र खुद एक 'टाइम पास' है, जिसकी प्रेमकहानी का अन्त भी 'टाइम पास' बनकर रही जाती है। वह अपने जीवन में किसी कार्य को छोटा-बड़ा नहीं मानता है। उसके चहरे पर हर समय खुशी और आनंद का भाव छलकता रहता है। इसके साथ ही दगडू ने प्रेम को नए-नए रुप में अभिव्यक्त करने का भी प्रयास किया है। इसमें दगडू एवं प्रजक्ता की प्रेम कहानी 'टाइम पास' बनकर ही रह जाती है लेकिन उसमें अभिनय का प्रदर्शन बहुत ही गंभीर है। इसलिए यह फिल्म किसी को भले ही 'टाइम पास' लगे परंतु उसमें जीवन का एक अहम पहलू हमारे सामने आता है। दगडू के डायलॉग ने दर्शकों का खूब मनोरंजन किया। उसके शब्दों में -"हम गरीब हुए तो क्या हुआ दिल के अमीर है ....काले हुए तो क्या हुआ हम तेरे-तेरे चाहनेवाले हैं।", "चलो पढ़ो लिखों पैसा कमाओं और मर जाव!... हम जियंगे भी अपनी मर्जी से.... और तुम पर मरेंगे भी अपनी मर्जी से चल-चल हवा आने दे।"[2] ये डायलॉग मराठी में बहुत ही लोकप्रिय हुए। उसके नाम के आधार पर ही हिन्दी के 'कपिल शर्मा कमेडी नाइट शॉ' की तरह मराठी में 'चला हवा येऊ द्या' नाम का कॉमेडी शॉ चालू हुआ।

'ख्वाड़ा' (2015) के निर्देशक शशांक शेण्डे की फिल्म है। इस फिल्म के प्रमुख पात्र की भूमिका में भाऊ शिंदे, सुरेखा, योगेश दामले, हेमंत कदम हैं। इस फिल्म की कथावस्तु भेढ़ चरानेवाले गढ़रीया परिवार के जीवन संघर्ष को देखकर सोचने पर मजबूर करती है। गढ़रीया का कोई गाँव नहीं है, इसलिए उसे भेड़ चराने के लिए हर दिन एक नए गांव में जाना पड़ता है। एक गांव का मुखिया (पाटील) हर हफ्ते गढ़रीय के एक भेड़ को मारकर खा जाता है। ऐसा करते हुए पाटील ने गढ़रीया परिवार के चार-पांच भेड़ खा लिए लेकिन उसके बदले में किसी तरह की कोई राशि नहीं दी। इससे त्रस्त होकर गड़रिये का लड़का उसके खिलाफ आवाज उठाता है तो उसी गाँव का पाटिल तथा उसके साथीदार मिलकर गढ़रीया परिवार को गाँव के बाहर करवाकर उन पर जुल्म करने लगते हैं। इसके पहले 80-90 के दशक की फिल्मों की कहानी में नायक-नायिका के शादी के लिए तथा साहूकारी, लगान व दहेजप्रथा का विरोध देखने को मिलता था। लेकिन आज के मराठी फिल्म का नायक अपने स्वयं पर हुए अन्याय के विरुद्ध न्याय की मांग करता है। यह इक्कीसवीं सदी का ही परिमाण है। इस फिल्म को ग्रामीण परिवेश में फिल्माया गया है। सभी लोग रोजगार के लिए शहरों में जाते हैं लेकिन इस फिल्म की कथावस्तु ने फिर से उन्हें गाँव की ओर आकर्षित किया है। भारत की आत्मा ही उसके ग्रामीण क्षेत्रों में बसती है क्योंकि कहीं आने-जाने पर अक्सर हमसे पूछ लिया जाता है कि आप कौन-से गाँव से हैं? इससे पहले फिल्मों में गढ़रीया परिवारों के जीवन के कुछ ही दृश्य हमें देखने को मिलते थे किन्तु 'ख्वाड़ा' फिल्म के माध्यम से उसके पूरे समग्र जीवन का चित्र एवं संघर्ष के यथार्थ की एक-एक घटना को गहराई के साथ व्यक्त किया गया है।

'किल्ला' फिल्म (2015) का निर्माण, निर्देशक अविनाश अरुण ने किया है। 'किल्ला' पहले राजाओं का दरबार होता था, जो आज समाज को उनके जीवन से रूबरू कराता है। यह फिल्म ऐतिहासिक पर्यटन स्थल के महत्त्व, गुरु-शिष्य परंपरा का आधुनिक सन्दर्भ व शिक्षिका की भूमिका में एक स्त्री की स्थिति व उसके संघर्ष को ध्यान में रखकर फिल्माया गया है। फिल्म में स्कूली बच्चों को उनकी शिक्षिकाएँ 'विजय दुर्ग किल्ला' के इतिहास से परिचय कराने के उद्देश्य से लाती हैं और किल्ले के इतिहास से रूबरू करवाती हैं। यह फिल्म की परिपाटी से एक अलग फिक्शन को हमारे सामने रखती है और कैमरे का इमोशन ही पाठक से अधिक संवाद करती हैं। बच्चों का अपनी भूमिका में गहरे उतरकर अभिनय करना आपने आप में एक अनूठी कला है। किल्ले के भीतर का अंधेरा और बाहर की घास पर सूर्य का पीला प्रकाश व बारिश का दृश्य मन को और मुग्ध करता है। किल्ले के इतिहास के साथ फिल्म में विद्यालय के अंतर्गत शिक्षक और शिष्य के संबंधों की पड़ताल भी देखने को मिलती है। प्राथमिक विद्यालय का माहौल जहाँ टीचर न होने पर बच्चों द्वारा शोरगुल का वातावरण, फिल्म को अधिक सजीव करता है। अमृता नामक शिक्षिका स्कूली बच्चों की मात्र शिक्षिका न होकर उसके साथ दोस्त व माँ की भूमिका में नजर आती हैं। आज के परिवेश में स्कूल में यह स्थिति कम देखने मिलती है। इस सन्दर्भ में मेरा मानना है कि गुरु-शिष्य की जो परंपरा प्राचीन समय से चली आ रही है, वह आज के वर्तमान युग में कहीं न कहीं लुप्त हो उठी है। 'किल्ला' फिल्म में अमृता के पति की शादी के दो वर्ष पश्चात् ही मृत्यु हो जाती है। उस समय अमृता की उम्र 22-23 वर्ष के लगभग रहती है। पति की मृत्यु के बाद इतनी कम उम्र में ही सारी जिम्मेदारियों का बोझ उसके सर पर आ जाता है। अपने बच्चे के पालन-पोषण व तमाम जिम्मेदारियों का निर्वाह करते हुए अमृता को कड़ा जीवन संघर्ष करना पड़ता है। अपने बच्चे के लिए अमृता इच्छा के बावजूद दूसरी शादी नहीं करती है। निष्कर्ष के रूप में 'किल्ला' फिल्म में मनुष्यता के रिश्तों की गहरी पड़ताल के साथ 'विजय दुर्ग किल्ला' की ऐतिहासिकता तथा मराठी समाज में स्त्री-जीवन के त्याग व संघर्ष को बड़े साफगोई के साथ व्यक्त करता है। 'विजय दुर्ग किल्ला' का दरवाजा (गोमुख) कोई तोड़ नहीं सकता था। वह चाहे मनुष्य हो या हाथी ही क्यों न हो क्योंकि उस दरवाजा का आकार ही तलवार के समान है। किल्ले के प्रति स्कूली बच्चों की अभिरूची होकर ऐसे कई तथ्य फिल्म के माध्यम से हमारे सामने आते हैं।

भारत में स्त्री की वास्तविक स्थिति को बयां करती चर्चित मराठी फिल्म 'जाणीवा' (2015) का निर्देशन राजेश रणशिंगर ने किया है। फिल्म में मुख्य भूमिका में सत्या मांजरेकर, वैभवी शंदिल्या, देवदूत्त दानी, अनुराधा मुखर्जी, संकेत अग्रवाल आदि हैं जो लगभग 14-15 साल के पात्र हैं। इसमें स्त्री के 'जाणीव' की कहानी दर्शाती है। उस महिला का बलात्कार होता है, उसको न्याय देने के लिए समीर नामक लड़का दायित्व उठाता है और कहता है पहले तिलक युग था अब तिल युग आया है। उसका रक्त या ब्लड गरम है इसलिए वर्तमान पीढी ज्यादा टाइम न लगाते हुए अन्याय के विरुद्ध जल्दी न्याय देनेवाली व्यवस्था चाहती है और वह व्यवस्था को बदलने के लिए सबको प्रेरित करता है।

मराठी फिल्मों के इस क्रम में 'श्री नागराज मंजुले ने 10 अप्रैल 2016 को 'सैराट' नामक फिल्म का निर्माण किया। अभी हाल ही में हुए अंतरराष्ट्रीय फिल्म महोत्सव में मराठी फिल्म 'सैराट' का चयन हुआ। इस फिल्म की नायिका आर्चि एवं नायक परशा के प्रेम व जीवन संघर्ष को दिखाया गया है। नायक तथा नायिका अलग-अलग जाति वर्ग के होने के बावजूद भी एक-दूसरे से प्रेम करते हैं और घर से भागकर शादी करते हैं। प्रेम के वास्तविक संघर्ष को इस फिल्म में सहजता से देखा जा सकता है। शादी के बाद जीवन यापन हेतु उन्हें कई समस्याओं का समाना करना पड़ता है। हमने अक्सर हिंदी फिल्मों में बहुत बार नायिका को वाटर पार्क में तैरते हुए देखा होगा लेकिन 'सैराट' फिल्म में पहली बार नायिका को गांव के 'कुंए' में तैरते हुए और बुलट व ट्रक्टर चलाते हुए दिखाया गया है। इस मराठी फिल्म ने पहली बार स्त्री भूमिका के कठोर से कठोर प्रसंगों का अभिनय दिखाया है। ग्रामीण परिवेश में बनी यह फिल्म ग्रामीण अंचल के यथार्थ व ग्रामीण लोगों के जीवन, संस्कृति, रुढ़ि, परंपरा, मान-सम्मान, प्रतिष्ठा आदि को बड़ी खूबसूरती से व्यक्त करती है।

इक्कीसवीं सदी के मराठी सिनेमा की एक विशेषता यह भी रही है कि इसने समाज की गंभीर से गंभीर समस्याओं को बड़ी सहजता और सटीक ढंग से उठाया है। जिसका एक अन्य उदहारण सतीश मोटलिंग द्वारा निर्देशित '35 टक्के वर पास' 20 मई 2016 नामक फिल्म में देखा जा सकता है। बच्चों पर पढाई का बोझ एवं माता-पिता द्वारा अव्वल आने का दबाव, बच्चों के मानसिक पटल पर क्या प्रभाव डालता है। इसका सटीक चित्रण फिल्म में देखने को मिलता है। फिल्म में प्रथमेश परब, आली घिया, यशोमान आपटे आदि ने स्कूल छात्रों की भूमिका अदा की हैं। समाज में प्रत्येक माँ-बाप अपने बच्चे से कक्षा में अव्वल आने अथवा 90-95 प्रतिशत अंक की उम्मीद रखते हैं मगर इन सबके बीच 'सिराज' नामक लड़का हाईस्कूल की फाइनल परीक्षा में 35 प्रतिशत अंक पाकर 95 प्रतिशत अंक पाने वाले विद्यार्थी से अधिक संतुष्ट एवं खुश दिखाई पड़ता है। प्रथमेश को जब कोई बोलता है कि तुम्हारे अंक तो बहुत कम है तो सिराज कहता है- "लोग बम विस्फोट, कश्मीर की बाढ़ भूल गए तो आप मेरे कम अंक को क्यों ध्यान में रखते हो, उसे छोड़ दीजिए ना।"[3] फिल्म में यह भी दर्शाया गया है कि समाज 35 प्रतिशत अंक पाने वाले बच्चों को कितनी हेय दृष्टि से देखता है, उनकी दृष्टि में ऐसे बच्चें अपने जीवन में कभी कुछ नहीं कर सकते हैं। लेकिन सिराज अपने अभिनय से समाज की इस मानसिकता पर चोट करता है. "मेरीटची पोर हि बसलीया नदीच्या काठावर, आपण साला नेहमीच 35 टक्के च्या काठावर". (वो ओ होउ, वाह हः होऊ, ओउ ओउ ओउ ना ना न, शुबी दुबई दुबा तारा री री रा, शुबी दुबी तारी री री टा टा) होऊ वो ओ आलो नाही मेरीट लिस्ट मध्ये, ना अडमिशनच्या फर्स्ट लिस्ट मध्ये, पण येणार पहिलेच येणार मैं तो हमेशा कॉलेज के ब्लैक लिस्ट में आता हूँ।"[4] फिल्म में सिराज अक्सर हिंदी सिनेमा के विख्यात अभिनेता शाहरुख खान के डाइलॉग बोलता है- "मैंने तुमको इतनी शिद्दत से पाने की कोशिश की, हर सितारे ने तुमसे मिलाने साजिश की।"[5] सतीश मोटलिंग की यह फिल्म स्कूली बच्चों के मनोविज्ञान को दर्शाती और सिर्फ उच्चतम अंक हासिल करने के हेतु पढाई के उद्देश्य की रूढ़ मानसिकता पर गहरी चोट करती है। फिल्म में कई इमोशनल सीन है जो दर्शकों को भावुक करते हैं। इसके साथ और भी ऐसे कई प्रसंग है जो हमें नए सिरे से सोचने के लिए बाध्य करते हैं।

किसान समस्या को ध्यान में रखकर निर्देशक मकरंद माने ने 'रिंगण' नामक मराठी फिल्म का निर्माण किया। 'रिंगण' फिल्म को 63वां नैशनल अवार्ड महोत्सव में बेस्ट मराठी फिल्म अवार्ड से सम्मानित किया गया है। इस फिल्म में शशांक शेण्डे एक किसान पिता की तथा साहिल जोशी पुत्र की भूमिका में है। साहिल की उम्र 5-6 साल की थी जब उसकी माँ की मृत्यु हो जाती है। जिसके बाद किसान पिता ही अपने पुत्र साहिल का पालन-पोषण करता है। शशांक शेण्डे का सबकुछ साहूकार के पास गिरवी है तथा साहूकार उसपर अपना कब्जा करना चाहता है लेकिन शशांक अपने खेत को बचाने के लिए रात-दिन मेहनत करता है और साथ ही अपने पुत्र को माँ-पिता दोनों का प्यार देता है। साहिल को बचपन में ही बता दिया जाता है कि उसकी माँ ईश्वर के यहाँ चली गई है, अतः वह अपनी माँ की खोज करते हुए पंढरपुर नामक गांव पहुंचता है। शशांक एक बेहद ही गरीब किसान एवं पिता की भूमिका का निर्वाह करते हुए कई बार हताश-निराश होकर आत्महत्या जैसा विचार उसके मन में आता है। प्रस्तुत फिल्म सिर्फ शशांक की कहानी ही नहीं अपितु पूरे महाराष्ट्र के किसानों की कहानी बयां करती है। 'रिंगण' (सर्कल) फिल्म में दो रिंगण है एक शशांक के जीवन का दूसरा उसके पुत्र का है। इसमें किसान शशांक आत्महत्या करने का भले ही विचार करता है लेकिन आत्महत्या नहीं करता है बल्कि शशांक रिंगण से अपने जीवन की समस्या को सूलझाने का उचित मार्ग निकालता है। याने पंढरपुर की वारी करने के बाद उसके अंदर एक तरह से आत्मविश्वास नई रौशनी लेकर आता है।" ('वारी' से आशय हर साल नियमित रुप से किसी देवता के दर्शन के लिए जानेवाली यात्रा से है) शशांक अपने जीवन में आनेवाली कठिन से कठिन समस्या का योग्य मार्ग से निर्वाह करता है। इसलिए 'रिंगण' फिल्म में महाराष्ट्र के 'श्री क्षेत्र पंढरपुर के विठ्ठल' के आस-पास का पूरा चित्रण दिखाया गया है और वह 'पंढरपुर क्षेत्र' एक पात्र के रुप में हमारे समक्ष आता है। पंढरपुर में हर साल लाखों की संख्या में भक्त दर्शन के लिए आते हैं। लोगों को लगता है ईश्वर कोई चमत्कार करेंगा और हमारे जीवन में उससे सब ठीक हो जायेगा, ऐसी हमारी आस्था रहती है परंतु ऐसा कदापि नहीं होता है। मनुष्य के अंदर की मानवता के जगते ही ईश्वर का आभास होता है। इससे पहले की फिल्मों में माँ के किरदार को अधिक महत्त्व दिया जाता रहा था मगर 'रिंगण' फिल्म में संभवतः पहली बार एक किसान पिता के दो संघर्ष को समग्रता के साथ दिखाया गया है। इस रूप में 'रिंगण' मराठी दर्शकों को एक नए-विचार की और प्रवृत्त करती है।

'मी येतोय' फिल्म का निर्देशक 'नीतिश अस्वार' ने इसी साल 2018 में किया है। जिसकी मूल भूमिका में घनश्याम दरोड़े ने किसान के पुत्र का अभिनय किया है और यह पूरी फिल्म उनके जीवन पर आधारित है। जब कभी हम किसी व्यक्ति का भाषण सुनते हैं तो हमें लगता है कि वह आगे चलकर बहुत बड़ा वक्ता या नेता बनेगा। यह सम्भावना घनश्याम दरोड़े में भी देखने को मिलती है, जिसकी उम्र 14 साल की है और जो सामान्य घर का लड़का होकर भी भाषण करने में किसी नेता से कम नहीं है। दरोड़े की यह कला उसे अपने समाज में एक विशिष्ठ पहचान दिलाती है। दरोड़े को उसके समाज में सभी 'छोटा पुढारी' अथवा 'छोटा नेता' के रुप में जानते हैं। घनश्याम दरोड़े को किसान जीवन के प्रति गहरी सहानुभूति है और उसका सपना ही किसानों के जीवन को सुखी देखना है। एक लम्बे अरसे से किसान सरकार से बैंक कर्ज एवं लाइटबिल माफ करने की मांग कर रहे हैं परन्तु इस विषय को लेकर सरकार सिर्फ दिखावा कर रही है।

सभी नेता बोलते हैं कि हमे किसानों की समस्या का एहसास है मगर वह धान कैसे उगाता है और बाजार में उस धान को क्या भाव मिलता है? उसे स्वयं अपने उगाए हुए अन्न का मूल्य निर्धारित करने का अधिकार नहीं है। जबकि एक दुकानदार अपने वस्तु का मूल्य स्वयं निर्धारित करता है। ग्रामीण क्षेत्र के किसानों का जीवन अत्यंत दुख भरा है। उन्हें धान के सिंचाई के लिए मात्र 4-5 घंटे ही बिजली मिल पाती है। सत्ता का किसानों के प्रति दोहरा चरित्र भी यहाँ स्पष्ट देखने को मिलता हैं। जहाँ सरकार बड़े-बड़े उद्योगपतियों को भरपूर बिजली उपलब्ध करवाती है लेकिन किसानों को मात्र कभी रात में तो कभी दिन में 4-5 घंटे ही देती है। उन्हें धूप, बारिश व ठंड में खेतों में अनवरत काम करना पड़ता है। इस बीच खेतों में काम करते हुए अगर वे बीमार पड़ जाते हैं तो उनके पास दवाई के लिए पर्याप्त पैसे भी नहीं होते। ऐसी स्थिति में उनका जीवन कितना कष्ट भरा है और उसके बाल-बच्चे कैसे स्कूल जाते होगे? किसान के कितने बच्चों को रोजगार मिला? ऐसे ही कई प्रश्न हमारे सामने उठते हैं, जिसका जीवंत चित्रण फिल्म में देखने को मिलता है। एक किसान जीवन भर साहूकार के कर्ज तले दबा रहता है, उस पर मौसम से मार तथा सरकार का उदासीन रवैया उसे आत्महत्या करने पर मजबूर करता है। किसानों की इसी बदत्तर हालत के कारण देश में किसान आत्महत्या की घटनाएं निरंतर बढ़ रही हो जो एक विचारणीय प्रश्न है! किसान जीवन के समग्र संघर्ष को केंद्र में रखकर 'मी येतोय' फिल्म के निर्देशक ने किसान जीवन के यथार्थ से दर्शकों को अवगत कराया है। अन्न उगाने वाला स्वयं अन्नदाता ही भूखा रहता है, इसका मार्मिक तथा जिवंत चित्रण फिल्म में स्पष्ट देखने को मिलता है। किसान जीवन को लेकर यह फिल्म अपने आप में अनूठी बन पड़ी है।

महानगरों में भाषा की हीनताबोध को लेकर आनंद द्वारा निर्देशित 'गावठी' फिल्म 7 जून 2018 को दर्शकों के बीच प्रदर्शित हुई। इसमें प्रमुख भूमिका में श्रीकांत पाटिल, योगिता चव्हाण, संदीप गायकवाड़, गौरव मोरे आदि मराठी अभिनेता हैं। गावठी (हिंदी अर्थ गँवार) नामक फिल्म अपने गाँव, भाषा, क्षेत्रगत वातावरण के प्रति हीन भावना एवं अपमान के स्थान पर सम्मान का भाव दिखाया है और इस दिशा में समाज को सोचने पर विवश किया है। अक्सर हम पढ़-लिख कर अपने माता-पिता की कम शिक्षा का, उनके रहन-सहन तथा उनके समाज से अपने आप को अलग करके उसका मूल्यांकन करने लगते हैं। ऐसी स्थिति में तथाकथित विद्वान लोग अपनी मातृभाषा, गाँव व अपने मिट्टी के प्रति असम्मान का भाव रखने लगते हैं। 'गावठी' ऐसे लोगों की मानसिकता पर सटीक चोट करती है। कई मायनों में यह फिल्म सांकृतिक वर्चस्व के महत्त्व को स्पष्ट करने के साथ लोगों को जागरूक करती है। मुंबई जैसे महानगरों में अँग्रेजी न आने के कारण लड़कों को 'गँवार' कहकर अपमानित किया जाता है। उन्हें नौकरी नहीं मिलती है मगर फिल्म का नायक 'गँवार' शब्द को कम न आंकते हुए उसके प्रति अभिमान का भाव रखता है क्योंकि वही नायक की अस्मिता है। कभी भी अपनी मातृभाषा में बोलते समय कौन क्या कह सकता है! इसका भान न रखते हुए अपनी भाषा के प्रति स्वयं को गर्व, सम्मान, आदर का भाव होना चाहिए. यह 'गावठी' फिल्म ने समाज को खुला संदेह है।

मराठी सिनेमा का विस्तार और उसके महत्त्व का अंदाजा इस बात से भी लगाया जा सकता है कि हिंदी सिनेमा के तमाम बड़े सितारे भी इसमें अपना कीमती समय देकर इसे संवृद्ध कर रहे हैं। इस सन्दर्भ में अक्षय कुमार निर्देशित मराठी फिल्म 'चुंबक' नए विषय एवं फिक्शन को लेकर सामने आती है। जिसकी पूरी कथावस्तु मराठी क्षेत्र से हैं तथा सभी पात्र मराठी हैं। फिल्म में 'बालू' नामक किरदार की भूमिका बहुत दिलचस्प है। बालू जो कि 13-14 साल का लड़का है, वह 'हुमिनिटीस ड्रीम' में फंसा है। इक्कीसवीं सदी के मराठी फिल्मों की बड़ी विशेषता यह रही कि इसमें बच्चों की महत्त्वपूर्ण भूमिका देखने को मिलती है, जिससे विषय की गंभीरता को बल मिलता है। जहाँ एक तरफ अपने देश में 'सेक्स' विषय पर दबे स्वर में बातें होती है वहीं समलैंगिकता के मुद्दे पर सिनेमा फिल्माना विषय की गंभीरता को दर्शाता है। कामवासना के चलते दुनिया में कितने भयावह जुर्म हो रहे हैं इसका अंदाजा लगा पाना कठिन है। हमारा समाज अक्सर ही अनुकरण की नीति पर चलकर सहज ही दूसरों का अनुकरण करने लगता है। इस सन्दर्भ में सिनेमा का प्रभाव अधिक गहरा होता है। ऐसे में निर्देशक द्वारा समलैंगिकता विषय का चुनाव समाज को रुढ़ि परंपरा व बोझिल संस्कृति से मुक्त अथवा उस पर खुले रूप में चर्चा करने में सहायक होगा।

निष्कर्ष : 'मी येतोय' इस फिल्म में बहुत छोटे उम्र का घनश्याम जैसे अन्य नायक फिल्म में अभिनय कर रहे हैं। जिन्होने कभी सोचा ही नहीं था कि फिल्म करने का मौका मिल सकता है। उन फिल्मों का जिक्र उपर्युक्त किया है और उसकी घटना हमारे आस-पास ही घटित है, जो अन्य घटना से विपरीत होकर अपने जीवन के साथ तादात्म्य स्थापित करती है। इसलिए साहित्य समाज का प्रतिबिंब है वैसे ही सिनेमा भी समाज में घटित होनेवाली समस्या को पर्दे के रुप में छायांकित करता है। किसी भाषा की लोकप्रियता सिनेमा, साहित्य, समाज में बोलने वाली संख्या से बढती है। फिल्में दरअसल हमें सीख देती हैं, हमारे सोचने के तरीके में हस्तक्षेप करती हैं और किसी से बोलना तथा चलने का तरीका सिखाती हैं। उसके साथ ही प्रेम और विवाह के मायने को बताती है और उसके प्रति व्यक्ति का रवैया बदलती हैं। आज के समय में सबसे महत्त्वपूर्ण बात है कि माँ-बाप द्वारा अपने पुत्र-पुत्री को बचपन से दिए हुए संस्कार, कहीं न कहीं लुप्त होते जा रहे हैं। हिन्दी फिल्म में अक्सर प्रेम-विवाह का विरोध माँ-बाप करते हैं मगर बाद में मान जाते हैं परंतु मराठी फिल्मों में शादी माता-पिता के आज्ञा से एवं रीति-रिवाज से होती है।

21वीं सदी का अपने देश का यथार्थ हर भारतीय भाषा के सिनेमा में अभिव्यक्त हो रहा है, वह चाहे भ्रष्टाचार का राजनीति पर प्रभाव या हूमेन राकेट, सेक्स, रिलेशनशिप, सामाजिक सुधार, किसान आत्महत्या जैसे आदि विषय को सिनेमा ने उजागर किया है। अब फिल्में पॉपुलर कल्चर का निर्माण करती हैं अब हर नायक-नायिका का कम कपड़े परिधान करना फैशन के रुप में उभरकर आ गया। पहले इस पर निर्बंध लाद दिए गए थे मगर अब ये खुला माहौल विकसित हुआ है। जिसने दर्शक को नई समझ विकसित करा दी। आजकल की फिल्म कई बार राजनीति से प्रभावित होती हैं और राजनीति को प्रभावित करती हैं। आम तौर पर जो विचार समाज पर हावी है क्योंकि बच्चों को लगता है कि माँ-बाप ने थोड़ी स्वतंत्रता देनी चाहिए मगर उन्हें लगता है कि बच्चे पर अच्छे संस्कार होना योग्य है। इस तरह का द्वंद्व फिल्मों में उभरकर आ रहा है।

राजनीति व शासन-व्यवस्था के रक्षक ही जनता के भक्षक बन रहे हैं। अपनी काम वासना को नियंत्रित न रखने की वजह से वह समाज के लिए हितकारी साबित नहीं हो पाते हैं, यह दृश्य फिल्म के जरिये दिखता है। ऐसी परिस्थिति स्वतंत्रता के पहले भी थी और आज भी हैं , सिर्फ स्वरुप बदला है। अपने यहां कानून-व्यवस्था में सबको एकसाथ ही देखने की आवश्यकता है। जिससे बहुत-सी समस्याओं का हल निकल सकता है।

संदर्भ ग्रंथ

1. बालक-पालक (4 जन 2013) निर्देशक रवि जाधव
2. टाइम पास (21 दिसं 2013) दिगदर्शक रवि जाधव
3. ख्वाड़ा (2015) दिगदर्शक शशांक शेण्डे
4. किल्ला फिल्म (2015) दिगदर्शक अविनाश अरुण
5. सैराट (10 अप्रैल 2016) दिगदर्शक श्री नागराज मंजुले
6. 35 टक्के वर पास फिल्म (20 मई 2016) सतीश मोटलिंग
7. वही,
8. वही,
9. रिंगण (2 जून 2017) दिगदर्शक मकरंद माने
10. मी येतोय फिल्म (1 जनवरी 2018) नीतिश अस्वार
11. गावठी फिल्म (7 जून 2018) दिगदर्शक आनंद
16. अभिनेता अक्षय कुमार की फिल्म चुंबक (27जुलाई 2018)